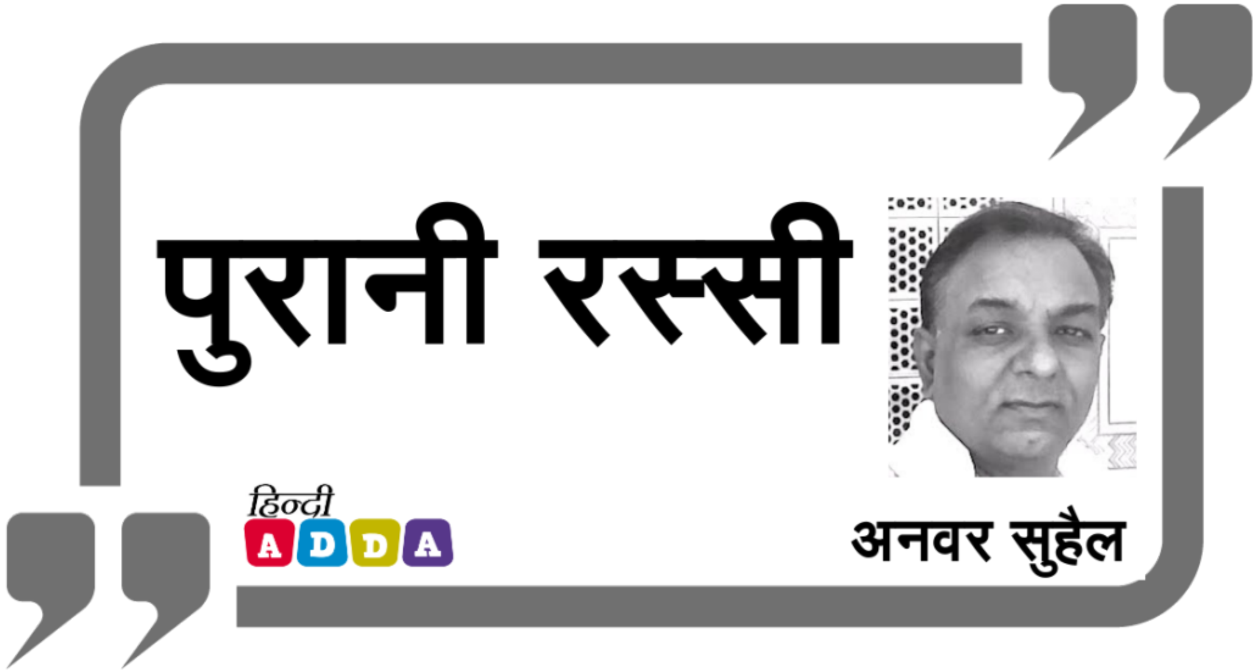

पुरानी रस्सी

सुलेमान के हाथों में एक मामूली-सी पटसन की रस्सी है। ऐंठी हुई गंदी सी चीकट-बदरंग रस्सी, जिसमें जगह-जगह सख्त सी गाँठें हैं। अंग्रेजी के 'वाय' आकार की रस्सी, जिससे पालतू मवेशी को बांधा जाता है।

बकरीद में कुर्बानी के लिए लाए गए बकरे शेरू के गले में बँधी थी ये रस्सी। सुलेमान ने यामा के मेहनती हाथों की उँगलियाँ याद कीं... ऐसी ही तो हुआ करती थीं, कठोर-सी,

गठीली, मजबूत गिरफ्त वाली उँगलियाँ! साथ ही याद की यामा की वह बात -'घाटा सहना तो हम गरीब-गुरबन की किस्मत है साहेब!'

यानी यामा के गँवई-अर्थशास्त्र के अनुसार, इनसानी रिश्ते में मिठास बचाए रखने के लिए किसी एक पक्ष को घाटा उठाना पड़ता है। सुलेमान और यामा के बीच उपजे संबंधों की नींव की पहली ंईंट पर यामा का नाम दर्ज है। उस नींव पर बनने वाली इमारत फिर पूरी बन नहीं पाई।

आज सुलेमान तन्हा बैठे अतीत की गलियों में भटकते हैं तो उन्हें यामा की बात सही लग रही थी। वाकई घाटे सहे यामा ने और हर बार फायदे में सुलेमान ही रहे।

छत्तीसगढ़ के सरगुजिहा आदिवासी अपने युवा नर-पशुओं की गरदन पर मंत्रबिद्ध रस्सी बांधा करते हैं, ताकि उनके पशु बुरी नजर और बुरी आत्माओं की कुदृष्टि से बचे रह सकें। पशु-धन के प्रति दुलार का प्रतीक हैं ये रस्सियाँ। जानवर बिक जाता है तो सुपुर्दगी से पूर्व वे उस जानवर के गले में बँधी अपनी मंत्रबिद्ध रस्सी खोलकर अपने पास रख लिया करते हैं। ये रस्सी दूसरे तैयार हो रहे पशु के गले में बांधी जाती है। यामा ने भूलवश अपने बकरे शेरू को विदा करते वक्त उसके साथ मंत्रबिद्ध रस्सी भी सुलेमान को सौंप दी थी। उसी रस्सी के लिए सुबह बैकुंठपुर से नुसरत आपी का फोन आया था। उन्होंने ताईद की थी कि उस रस्सी को फेंका न जाए। उसे सँभालकर रख लिया जाए। वह तो अच्छा था कि कसाई छुट्टन मियाँ ने रस्सी फेंकी न थी। छत पर जहाँ बकरे को बांधा गया था, वहीं हरी पत्तियों के ढेर के पास वह रस्सी मिल गई। सो तत्काल सुलेमान ने फोन पर नुसरत आपी को खबर कर दी कि आपी, रस्सी मिल गई है। अब उसे पहली फुर्सत पर किसी के हाथ आप के पास भिजवा दूँगा। नुसरत आपी ने फिर याद दिलाया -

'देखना सुलेमान, वह रस्सी गुमने न पाए। यामा बिचारी बहुत परेशान है।'

यामा परेशान हो भी क्यों न? शेरू यामा का सबसे प्यारा बकरा था। भूरे रंग का स्वस्थ एक साल की उम्र बकरा। बकरीद में कुर्बानी के लिए कम से कम एक साल का बकरा जिबह किया जाना चाहिए। यामा बकरा नहीं बेचना चाहती थी। इसलिए यामा ने तर्क गढ़ा था कि शेरू को एक साल होने में अभी आठ दिन बाकी है। सुलेमान के साथ रज्जब भाई थे। हक-नाहक, हराम-हलाल आदि दीनी मसायल के वह अच्छे जानकार थे। इस्लामी समाज में इन बातों पर बड़ी तवज्जो दी जाती है। चूँकि सुलेमान सिर्फ नाम के मुसलमान थे, इसलिए वे बारीकियों से अनजान थे। रज्जब भाई ने किताबों का हवाला देते हुए बताया कि जानवर एक साल का न हो फिर भी यदि उसकी बढ़त

और सेहत एक साल के जानवर जैसी हो तो ऐसे जानवर की कुर्बानी जायज है। तो, शेरू की अच्छी सेहत, कद-काठी आदि उसके एक साल की उम्र वाली कमी का अच्छा काट थी। यामा शेरू को कतई बेचती नहीं, उसने बताया भी था कि कइ ग्राहकों को वह लौटा चुकी है। शेरू उसकी जान है। शेरू चला गया तो उसका घर वीरान हो जाएगा, लेकिन सुलेमान को वह मना करे भी तो करे कैसे? सुलेमान, जो उसके भरपूर दिनों में एक वसंत की तरह मिला था। सुलेमान, जिसे पहली नजर देखने के बाद उसके मन की बगिया में मिलन के फूल खिल उठे थे। सुलेमान, जिससे उसने तब कहा था - 'हमारे समाज में माना जाता है कि जिस पर मन आ जाए, उसे पा लेने में कोई बुराई नहीं। हम आदिवासी आप लोगों की तरह प्यार पाने के लिए तड़पते नहीं रहते।'

किशोरवय सुलेमान, जो अब तक प्रेम और देह-सुख से वंचित था, उसकी तो जैसे मनचाही मुराद पूरी हो गई हो। यामा से पहली मुलाकात तब हुई थी जब सुलेमान ने जवानी की दहलीज में कदम रखा था। 'अँगड़ाई' और 'इंद्रलोक' जैसी मादक-किताबें कोर्स के किताबों के बीच जगह पा रही थीं। 'जेम्स हेडली चेज' के जासूसी उपन्यास और 'लेडी चेटर्लीज लवर' के हिंदी अनुवाद के आगे मुंशी प्रेमचंद फीके लगते। अमृता प्रीतम की 'रसीदी टिकट' और 'मंटो की कहानियाँ' टाइम-पास का साधन थीं। घस्सा और गुल्लू जैसे नालायाक लड़कों की संगत में मजा आता था, क्योंकि उनके पास अजीबो-गरीब यौन-अनुभव और रंगीन किस्सों का चटखारेदार खजाना था। माल पटाने और चक्कर चलाने के हजारों आजमाए हुए 'श्योर-शॉट' नुस्खे थे उनके पास। सुलेमान पढ़ने में तेज तो था किंतु स्वभाव से डरपोक। घस्सा और गुल्लू उसे देख ताना मारते कि पढ़ाकू लड़के किताब में दिन-रात आँखें फोड़ा करते हैं। सुलेमान जहीन था। सो वह मुहल्ले की लड़कियों, दीदियों, आंटियों और यहाँ तक शिक्षिकाओं तक से मन ही मन इश्क लड़ाया करता था। हकीकत में उसकी कोई गर्ल-फ्रेंड न थी। अपनी सीमाएँ जानते हुए भी सुलेमान इस क्षेत्र में हाथ-पाँव मारने से बाज न आया करते। ऐसे ही किसी रोज नुसरत आपी के सरकारी आवास में काम करने वाली, सीमेंट-रेत ढोती मजदूर यामा से सुलेमान की आँखें चार हुई थीं।

इस तरह आँख लड़ाने का उसके पास और भी कई जोरदार तजुर्बा था, लेकिन उस दिन जो आँख लड़ी, वह सुलेमान के जीवन का अविस्मरणीय हिस्सा बन गई। उस दिन पहली बार कोई आँखें चार होने के तुरंत बाद प्रतिक्रिया में मुस्कुराई थी। झट से सुलेमान को घस्सा और गुल्लू के प्रेतों का फार्मूला याद हो आया - 'हँसी सो फँसी।'

फिर सुलेमान किसी न किसी बहाने यामा के आस-पास मँडराता रहा। मन ही मन कई तरह के डॉयलाग तैयार करता, उनकी एडीटिंग करता, फिर कई-कई बार स्वर बदल

कर उसे दुहराता किंतु यामा के पास पहुँचकर उसके मन में बैठा संकोच का भूत उसकी वाणी मूक कर देता। तगाड़ी सर पर ढोए आते-जाते यामा फुसफुसाई तो जैसे उसे चार सौ चालीस बोल्ट का करेंट लगा - 'आज यहाँ रुकना है न?'

सुलेमान को उसी दिन वापस लौटना था। नुसरत आपी के घर वह रुकता न था। सुबह आता और शाम तक वापस लौट जाया करता था। यामा के सवाल के जवाब में उसने 'हाँ' के हिसाब से सिर हिला दिया था। यामा ने चुपके से बताया कि वह बंगले के पीछे पुराने गैरेज में रहती है।

सुलेमान ने जब नुसरत आपी के एक दिन और रुक जाने की बात नहीं टाली तो आपी बहुत खुश हुर्इं, क्योंकि सुलेमान के नौशे भाई आफिसियल काम से बाहर गए हुए थे। आपी घर में अकेली थीं।

नुसरत आपी ने बैठक में उसके सोने की व्यवस्था की थी।

रात में सोने से पहले सुलेमान घर से बाहर निकला। पीछे नौकरों के आवास से किसी औरत के हँसने की आवाज सुनाई दी। वह चौंक पड़ा। देखा कि आँगन में मुनगे के पेड़ के नीचे चूल्हे में आग जलाए यामा बैठी है। सितंबर माह के शुरुआती दिन थे। बेहद खुशगवार मौसम। मुनगे की डालियों के पीछे से झाँकता हुआ उत्सुक चाँद। चाँद की सफेद किरणों के साथ बंगले के बाहर लगे मरकरी लैंप की पीली रोशनी का इंद्रजाल। सुलेमान को यामा का तांबई चेहरा एक अनोखे नूर से रोशन नजर आया। उसे घस्सा और गुल्लू की बात याद हो आई कि 'अबे साले, जवानी में तो गदहिया भी सुंदर नजर आती है।' लेकिन नहीं, यामा के पास वाकई कुदरती-खूबसूरती है। वातावरण के सम्मोहन से घायल सुलेमान यामा के पास पहुँचा। उस समया उसके मन में, नुसरत आपी का ख्याल न था, न नौशे-भाई का डर। मिट्टी के चूल्हे पर तवा चढ़ा था। यामा का चेहरा पसीने से तर था, जिस पर चूल्हे की लाल आँच का ताप जज्ब था। अपने पास सुलेमान को देख यामा मुस्कुराई -

'रोटी बना लूँ**?'**

सुलेमान हँसा, डर कम हुआ -

'आपी को पता चल गया तो?'

सुलेमान वहीं उसके पास जमीन पर उकड़ूँ बैठ गया -

'लाओ, खिलाओ।'

यामा को क्या मालूम कि शर्मीला साहेबजादा ऐसी हरकत कर बैठेगा। वह घबराई - 'नहीं, किसी ने देख लिया तो नौकरी चली जाएगी।'

सुलेमान हँसा -

'बस, हवा निकल गई।'

फिर एक लंबी चुप्पी। चारदीवारी के बाहर झाड़ियों से टिटहरी की आवाज गूँजी। सुलेमान ने यामा से उसका नाम पूछा तो यामा ने उसे घूरकर देखा -

'नाम में का धरा है?'

फिर चूल्हे की रोशनी में अपना दाहिना हाथ उसने आगे बढ़ाया। उसकी कलाई में गोदने से फूल-पत्तियों के बीच लिखा था - 'श्यामा'।

साँवली सूरत, तीखे नैन, पतले-पतले पल्टे हुए होंठ, घुँघराले-काले बाल और साँचे में ढली श्रमदेवी यामा। यामा ने पूछा तो सुलेमान ने बताया कि आपी की तरफ से वह निश्चिंत रहे। वे टीवी देख रही हैं। रोटी बनाकर यामा ने फुर्सत पाई। चूल्हे से बची लकड़ी निकालकर बुझाने लगी। सुलेमान ने यामा से इजाजत ली और अपने कमरे में वापस लौट आया।

उसका मन अब कहाँ लगता! वह बिस्तर पर अनमना-सा लेट गया।

आपी टीवी पर सास-बहू वाले सीरियल का आनंद ले रही थीं। नौशे-भाई बीडीओ हैं। अक्सर दौरे पर रहते हैं। उस दिन भी वह घर पर न थे। नुसरत आपी के दोनों बच्चे यानी सुलेमान के भांजे रायपुर के एक बोर्डिंग स्कूल में थे। नुसरत आपी नौकर-चाकरों के साथ सरकारी आवास में अक्सर अकेले दिन बिताया करतीं। रात जब आपी के खर्राटे गूँजने लगे, तब सुलेमान उठा। दीवाल-घड़ी पर उस समय बारह बज रहे थे। सुलेमान चुपके से मुख्य-द्वार खोलकर सीधे पीछे गैरेज की तरफ पहुँचा। गैरेज से लगे कमरे के अंदर से जलती ढिबरी की पीली मटमैली रोशनी दरवाजे की झिर्रियों से बाहर झाँक रही थी। निडर सुलेमान ने दरवाजे पर दस्तक दी। अंदर आहट हुई और दरवाजे के पास यामा की आवाज आई -

'कौन?'

सुलेमान ने फुसफुसाया - 'मैं।'

दरवाजा खुला, यामा ब्लाउज और लहँगे पर थी। उसने जल्दी से सुलेमान को कमरे के अंदर कर लिया।

'हे भगवान, किसी ने देखा तो नहीं?'

'मुझे कुछ नहीं मालूम, समझ लो मेरी मति मारी गई है।'

कमरे में जमीन एक तरफ गुदड़ी बिछी हुई थी। एक तरफ गिरस्ती का दीगर सामान और पानी का मटका रखा था। यामा ने गुदड़ी पर उसे बिठाया। सुलेमान ने उसे अपने पास बैठने का इशारा किया। यामा झिझकते हुए पास आ बैठी। सुलेमान ने डरते-डरते उसका हाथ पकड़ा। बाप रे बाप, उस मेहनती हाथ की उँगलियाँ कितनी सख्त थीं। हथेलियों पर गाँठें थीं। बेहद सख्त खुरदुरा हाथ। जैसे कि किसी पेड़ की छाल हो।

यामा ने उस रात कुदरत के कई गोपन-रहस्यों पर से पर्दा उठाया था।

वो एक ऐसी रात थी जिसमें सुलेमान अपनी सुध-बुध खो चुका था। वो एक ऐसी रात थी जिसकी 'सुब्ह कभी न हो' ऐसा वे चाहते थे। वो एक ऐसी रात थी जिसे फिर सारी उम्र दोहराया न जा सका। वो एक ऐसी रात थी जब दो प्यासी रूहें एकाकार हुई थीं। बस, उस रात की याद उनकी जिंदगी का सरमाया थी। यामा के पूर्ण समर्पण की कीमत उसने अदा करनी चाही, किंतु गरीब यामा नाराज हो गई। उसने तर्क दिया कि ये रिश्ता अकेले का तो नहीं। दोनों ने इन अनमोल लम्हात को साथ-साथ जिया है, फिर कोई एक इसका श्रेय क्यों ले? यामा लालची नहीं थी, जबकि नई-नवेली दुल्हन मुँह-दिखाई में पति को अच्छा चूना लगा देती है। यही अदा तो यामा को कुछ खास बनाती है।

सैयद घराने की खूबसूरत, छरहरी युवती सुरैया से सुलेमान का निकाह हुआ, लेकिन उसके साथ सुलेमान का तजुर्बा बहुत कुछ मशीनी-सा रहा। जैसे बिन फोरन की दाल, बिन छौंक की सब्जी। रिश्ते में रूहानी छौंक के लिए सुलेमान अक्सर यामा के समर्पण की याद किया करता। वह आदिवासी युवती उसके कैशोर्य का खूबसूरत 'इनकाउंटर' थी। जवानी की दहलीज में कदम रखते युवक की यौन-जिज्ञासा का सुलभ-समाधान थी यामा। सुलेमान अपने परिवेश की महिलाओं से यामा की तुलना करता तो पाता कि वर्जनाओं से मुक्त कितना स्वतंत्र अस्तित्व था उसका। बिंदास, बेपरवाह, सहज, स्वतंत्र, स्वस्थ, श्रम-आधारित, निश्चिंत जीवन। आधुनिकाएँ तनाव-मुक्ति और

प्राकृतिक सुंदरता के लिए सौंदर्य विशेषज्ञाओं से ऐसी ही जीवन-पद्धति के लिए सलाह लिया करती हैं। यहाँ तो नुसरत आपी मेकअप करने के बाद नकाब पहन लेंगी, तब अम्मी का आदेश होगा - 'बेटा सुलेमान, नुसरत के साथ अस्पताल चले जाओ, अकेले कैसे जाएगी वो!' या - 'बेटा, जरा नुसरत के साथ यूनिवर्सिटी तो चले जाओ।' या - 'बेटा सुलेमान, नुसरत आपी को जाकर विदा कराकर घर ले आओ।'

सुलेमान नौकरी के सिलसिले में जबलपुर, मंडला, शहडोल आदि जगहों में दस-बारह बरस बिताकर जब वापस लौटे तो एक दिन नुसरत आपी के घर उन्हें बड़ी शिद्दत से यामा की याद आई। इशारों में पूछा उन्होंने कि पहले सर्वेंट्स-क्वाटर्स में कितने नौकर-चाकर रहा करते थे। कई वफादार नौकरों को याद कर नुसरत आपी ने बताया कि सबसे ज्यादा मुँहलगी नौकरानी यामा अब भी उनके घर में आती है। यहाँ से पंद्रह-बीस किलोमीटर दूर एक गाँव में वह रहती है। आजकल वह बकरियाँ पालती है। बिलासपुर, रीवा से मवेशियों के व्यापारी इधर आते हैं और बकरियाँ खरीद कर ले जाते हैं।

सुलेमान हिंदुस्तानी समाज में विकसित एक व्यवहारिक मुस्लिम हैं। धर्म का सहिष्णु रूप स्वरूप उन्हें पसंद है। धार्मिक लोगों में मौजूद अड़ियल श्रेष्ठता-बोध के वह शिकार नहीं हैं। उनका मानना है कि हर आस्थावान व्यक्ति जो किसी न किसी बहाने ईश्वर का नाम लेता है, वह सही मार्ग है। वह चाहे अल्लाह का नाम लेता हो, भगवान का या फिर यीशु मसीह का। किसी की श्रद्धा का मजाक उड़ाना या फिर उन पर शक करना उन्हें नापसंद था। हाँ, वह अम्मी-अब्बू के जीवनकाल में जरूर कुछ बंधन में रहे। फिर घर से बाहर नौकरी में ऐसा व्यस्त हुए कि धर्म और कर्मकांड उनके लिए औपचारिकता मात्र बन कर रह गया था। वे ईद के दिन दोस्तों को घर बुलाकर सेवइयाँ खिलाते। उनके मांसाहारी दोस्तों के लिए बेगम सुरैया कबाब, टिकिया और पुलाव-पराठे बनाया करतीं। बकरीद पर उन्होंने कभी कुर्बानी नहीं करवाई थी। उन्हें अजीब लगता था कि त्योहार के दिन बकरे की कुर्बानी की जाए। हजरत इबराहीम अलैहिस्सलाम के जमाने से चली आ रही रस्म को अब प्रतीक-रूप में मनाने का कोई दूसरा तरीका बन जाना चाहिए था। वैसे उनके मांसाहारी दोस्त उन्हें कुर्बानी कराने के लिए प्रेरित किया करते, किंतु शाकाहारी दोस्तों की तादाद ज्यादा थी। इसलिए ईद की तरह बकरीद भी उनके घर सेवइयों का पर्व रहता। हर साहबे-निसाब **(**सामर्थ्यवान**)** बालिग पर कुर्बानी करने का हुक्म है। ये सुन्नते-इबराहीम है। वैकल्पिक रूप में कुर्बानी की अनुमानित लागत-राशि वे शहर के एक यतीमखाने में भेज दिया करते।

यतीमखाने में उनके नाम से बकरे की कुर्बानी होती। वहाँ अनाथ बच्चे और परजीवी मौलवी, उस कुर्बानी के गोश्त का जायका साल भर याद रखते। यामा से मिलने का अवसर पाने के लिए उन्होंने इस बार की बकरीद में स्वयं कुर्बानी करने का फैसला लिया। कुर्बानी के लिए बकरा लेने वे यामा के गाँव जाना चाहते थे। नुसरत आपी शौहर के मातहत रज्जब भाई को उनके साथ यामा के गाँव भेजना चाहती थीं, क्योंकि रज्जब भाई स्थानीय थे साथ ही मजहबी मामलों के जानकार...

दोपहर का खाना खाकर वे लोग स्कूटर से निकले। सुलेमान स्कूटर चला रहे थे। रज्जब भाई रास्ता बताते जाते। होली अभी-अभी बीती थी। माहौल में फागुन की मस्ती बरकरार थी। पलाश के लाल-लाल फूल जंगल का शृंगार बने थे। आसपास कहीं बारिश हुई थी शायद, तभी हवा में नमी थी। आसमान पर आवारा काले बादल धमा-चौकड़ी कर रहे थे। रास्ते में दस-पंद्रह घरों वाले छोटे-छोटे गाँव आते। रज्जब भाई किसी गाँव का नाम भालूगडार बताते तो किसी का महुआ टोला। किसी का परसा टोला तो किसी गाँव का नाम आमाखेरवा। छोटे-छोटे खेत धान की अगली रोपाई लगने तक के लिए खाली पड़े थे। ये एक-फसली इलाका है। धान कटाई के बाद ग्रामवासी या तो ठेकेदारों के पास काम खोजने चले जाते या आसपास की खदानों में खप जाते या फिर महुआ बीना करते। यहाँ सिंचाई का साधन 'फिर पानी दे मौला' की गुहार भर है। अच्छी बारिश के बाद ही 'चिड़ियों को धानी' और 'बच्चों को गुड़धानी' मिल पाता है।

सुलेमान का मन कहाँ रम पा रहा था गँवई-देहात की पगडंडियों में। वे तो बस अपनी यामा के दीदार को बेचैन थे। रज्जब भाई ने कहा - 'सँभल कर जनाब, आगे एक बड़ी नाली है, उसके पार जो गाँव दिख रहा है, वहीं रहती है बकरीवाली श्यामा..!'

स्कूटर के हैंडिल को मजबूती से थाम लिया सुलेमान ने। समृद्ध किसानों के घरों को पार कर उनका स्कूटर गाँव के बाहर निकलने लगा तो उनसे रहा नहीं गया - 'गाँव तो अब खत्म हो गया, रज्जब भाई?'

जवाब मिला - 'इत्मीनान रखें जनाब... बस आ ही गए समझिए।'

बेशरम की झाड़ियों से घिरी एक जर्जर सी झोंपड़ी के आगे स्कूटर रुकी। गाँव का आखिरी घर था वह। आगे पथरीली चट्टान वाली जमीन के बाद एक छोटी-सी पहाड़ी थी। तेंदू, महुआ और आम के इक्के-दुक्के पेड़ देहात की निशानी बतौर मौजूद थे।

रज्जब भाई स्कूटर स्टैंड पर खड़ा कर दूर पहाड़ी के पश्चिम तरफ देखने लगे। वहाँ ढलान पर एक औरत ढेर सारी बकरियों को हँकाले ला रही थी।

क्षितिज पर सूर्य के अंतिम झलक के निशानात मौजूद थे।

रज्जब भाई ने सुलेमान से कहा - 'अच्छे समय पर आए हैं, बकरा देखने या तो सुबह आए आदमी या फिर शाम के समय।

दिन में बकरियाँ चरने चली जाती हैं। और हाँ, आप थोड़ा स्कूटर के पीछे चले जाएँ। यामा का एक बकरा बड़ा लड़ाकू है।'

सुलेमान स्कूटर के पीछे सचेत होकर जिधर रज्जब भाई की निगाहें थीं, उधर देखने लगे।

टीले के नीचे खेतों के किनारे-किनारे बनी पगडंडी पर, एक दुबली-पतली अधेड़-सी महिला छड़ी से बकरियों को हँकालते अब पास आ रही थी। रज्जब भाई ने उस महिला को ही यामा कहा है, क्या वह महिला उनकी यामा ही है? उसका वह चिरयुवा सौंदर्य क्या समय के हाथों मार खा गया? उसके रूप के सुलेमान दीवाने हुआ करते थे। यामा का सौंदर्य कोई 'शहनाज ब्यूटी मार्का' उधार का लेपन थोड़ई था। उन्हें अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ।

बकरियों के रेवड़ की अगुआई एक बड़ा-सा मजबूत बकरा कर रहा था। तो यही है मरखन्ना बकरा। सुलेमान स्कूटर के पीछे सँभले रहे। बकरा जबरदस्त था। बछड़े के आकार का होगा। सींगें तनी हुंइं नुकीली। ठुड्ढी पर रज्जब भाई जैसी दाढ़ी। बकरा सीधे अंदर चला गया। उसके पीछे हाफ-पैंट पहने एक सूखा-मरियल सा आदमी नजर आया। रज्जब भाई ने बताया कि ये आदमी यामा का पति रामपरसाद है। फिर ढेर सारी बकरियों के पीछे महिला करीब आई। सुलेमान ने हड्डियों की ढाँचा बनी उस स्त्री को पहचाना नहीं।

रज्जब भाई ने इशारा किया कि यही यामा है।

बकरियाँ हँकालती स्त्री नजदीक आई और सुलेमान को चीन्हने की कोशिश करने लगी।

चालीसा ही लगा था सुलेमान को, लेकिन उनके सिर पर अब बहुत कम बाल बचे हैं। जो बचे भी हैं उनमें अधिकांश सफेद हो चुके हैं। चेहरे पर मासूमियत की जगह खुर्राहट

आ बैठी है। हाँ, अपनी बड़ी-बड़ी बतियाती आँखों पर उन्हें अब भी भरोसा था। दोनों आँखें टनाटन छह बाई छह हैं। चश्मा की जरूरत नहीं पड़ी अब तब, जबकि काम लिखा-पढ़ी का वाला रहा है। यामा के चेहरे पर सुलेमान वह चंचल आदिवासी श्रमबाला खोजने लगे, जिसने उनके जीवन में रास-रंग के अध्याय जोड़े थे। लेकिन ये क्या, यामा के चेहरे की सूखी चमड़ियों पर झुर्रियों ने बसेरा बना लिया है। उसका शरीर हड्डियों का ढाँचा ही तो है। हाँ, होंठों पर जब निगाहें पड़ीं तब वे जान गए कि ये यामा ही है। वैसे ही पलटे हुए पतले-दुबले होंठ। यामा को होंठों का चूमा जाना कतई पसंद नहीं था। गुदगुदाने लगती वह या चिकौटी काटती -

'ये क्या शहरी आदमी वाली हरकत करते हैं?'

वे चिढ़ाया करते - 'गँवइया लोग कैसी हरकत करते हैं?'

यामा रूठने का अभिनय करती - 'हट गँवार कहीं के!'

सुख के अंतरंग क्षणों में अनौपचारिक हो जाती थी यामा।

रज्जब भाई ने मरखन्ने बकरे से आधे साइज के एक बकरे की ओर इशारा कर बताया कि यही है वो बकरा जिसे यामा अभी बेचना नहीं चाहती है। यामा के वर्तमान ने उन्हें अंदर तक हिला कर रख दिया। सुलेमान की तबीयत नम हो चली थी। वे भूल गए थे कि यहाँ किस उद्देश्य से आए हैं? यामा का रामपरसाद खीसें निपोरते पास आया -'गरीबों का महल देख रहे हैं साहब?'

रज्जब भाई के साथ सुलेमान आँगन के बीच बिछी चारपाई के पास आ गए। अब इक्का-दुक्का काले बादलों की जगह आसमान पर काले बादल पूरी तरह छा गए थे। इधर आजकल मौसम ऐसे ही रूप दिखा रहा है। सूरज ढंग से अपना कमाल दिखा नहीं पाता है कि बादल अपने काले कंबल से उसे ढक लेते हैं।

रज्जब भाई चिंता करने लगे - 'रैन-कोट भी नहीं साथ लाए हैं हम!'

सुलेमान ने अनुमान लगाया - 'ज्यादा नहीं बरसेंगे ये बादल, हवा तेज है, उड़ा कर ले जाएगी।'

झोंपड़ी के बाहर परछी थी, जिस पर मरखन्ना बकरा बांधा गया था। बहुत तगड़ा बकरा था। उसके जिस्म से अजीब गंध फूट रही थी। ऐसी गंध तो रेलवे स्टेशन पर लावारिस घूमने वाले बुढ़े साँड़नुमा बकरे की देह से फूटती है कि उल्टी हो जाए।

मरखन्ना बकरा मिमिया रहा था।

यामा की झोंपड़ी में केवल एक ही कमरा है। उसी कमरे में यामा एक-एक कर बकरियों को घुसाने लगी। झोंपड़ी के सामने आँगन की दूसरी तरफ एक छोटी-सी परछी थी, जिसके नीचे चूल्हा था। दूससरी तरफ एक चट्टान की सिल रखी थी, जिस पर एक नकटी डेगची में पानी और कुछ जूठे बर्तन रखे थे।

रामपरसाद ने चारपाई बिछा, उसे गमछे से झाड़कर सुलेमान को बैठने का इशारा किया।

सुलेमान झोलंगी-सी चारपाई पर बैठे तो ठीक पंजाबी ढाबे की तरह का कुछ आराम मिला। बादल आसमान पर अपना असर दिखाने लगे।

हल्की बूँदा-बाँदी चालू हुई।

रामपरसाद और रज्जब भाई के बीच कुछ बातें हुइं फिर रज्जब भाई ने कहा - 'आप आराम से बैठें, हम एक और जगह से आते हैं, सुना है वहाँ भी अच्छा माल है।'

सुलेमान यही तो चाहते थे कि यामा के साथ एकांत के कुछ पल मिलें। रामपरसाद, यामा को चाय बनाकर रखने का आदेश दे कर चला गया।

यामा बकरियों को लहा-पटियाकर, पुचकार-दुलार कर ठीहे से बाँध रही थी। उन लोगों के जाते ही बारिश होने लगी।

यामा ने कहा - 'परछी पर चले आइए, भीग जाएँगे।'

सुलेमान ने सोचा कि जवाब दे कि अपनी यामा को इस हालत में देख वह अंदर तक भीगे हुए हैं। लेकिन पानी तेज हुआ, तब सुलेमान को परछी में सिर छुपाने जाना पड़ा। मरखन्ना बकरा उन्हें ताका हुआ था जैसे, सींग मारने के लिए लपका।

यामा चिल्लाई तो बकरा शांत हुआ - 'नया आदमी देख ऐसे ही गुस्साता है बदमाश!'

सुलेमान ने बात का सिरा पकड़ा - 'तो अब मैं नया आदमी हो गया यामा...?'

'अगर पुराने आदमी हैं तो इत्ते दिन बाद याद किया, वो भी मतलब पड़ने पर!'

यामा का गुस्सा वाजिब था। झोंपड़ी के अंदर पानी के छींटों से बचते हुए सुलेमान ने बिगड़े हालात को सँभालना चाहा - 'ये तुमने अपना क्या हाल बना रखा है यामा?'

'हर चीज का अंत होता है साहेब, जवानी का भी अंत होना ही था। अब जिनके दिन हैं वे मजा लें, हमारे दिन तो खत्म हुए।'

इतनी तीखी बातें तो नहीं करती थी यामा। जमाने की ठोकर ने तल्ख बनाया है शायद उसे। यामा बकरियों को पानी से बचाने का उपक्रम करती बड़बड़ाती जाती -

'हम गरीब-मजदूरों को ये दिन देखना होता है साहब, जवानी में रूप के दीवानों की कमी नहीं होती। बुढ़ापा ढोने के लिए सही साथी नहीं मिलता।'

बारिश की बौछार परछी पर आने लगी तो गबरू छटपटाने लगा।

सुलेमान झोंपड़ी के अंदर जा घुसे।

बारह बाई दस का एक अँधेरा कमरा। जिसमें जगह-जगह पानी टपक रहा था। बकरियाँ चूते हुए पानी से बचने के लिए मिमिया रही थीं। कमरे के एक कोने में गृहस्थी का सामान बिखरा हुआ था। यामा मवेशियों को बारिश की बौछार से बचाने के लिए फटी-पुरानी बोरियों से बचाने-ढकने का उद्यम करने लगी। घर आए मेहमान सुलेमान को उचित आतिथ्य न दे पाने से वह लज्जित भी थी। उन्होंने यामा को सलाह दी कि खपरैल छाने के पहले छप्पर पर पोलीथीन की शीट क्यों नहीं बिछवा दिया था? उससे कम से कम पानी तो घर के अंदर नहीं चुएगा।

यामा क्या जवाब देती। उसके चेहरे पर चिपकी हुई थी घनघोर अभाव से उपजी एक इंची मुस्कान। सुलेमान ने महसूस किया कि ये कहीं फ्रांस की रानी की तरह की मासूम सलाह तो नहीं थी कि यदि रोटी न मिल रही हो तो ब्रेड क्यों नहीं खाती भूखी जनता? सुलेमान दिल से चाहने लगे कि वह यामा के कुछ काम आ सकें। लेकिन हमेशा की तरह उन्हें लगा कि वे यामा के दरवाजे भिखारी या ग्राहक बनकर आए हैं। कभी प्रणय-याचना, कभी देह-सुख और आज बकरे के लिए, जिसे वह बेचना नहीं चाहती है।

यामा को उन्होंने अक्सर रुपये देने चाहे किंतु स्वाभिमानी यामा ने निर्धनता के बावजूद रुपये लेने से इनकार कर दिया। साड़ी या गहने भेंट करने की इच्छा तो सुलेमान के मन में हुआ करती थी, लेकिन जाने किस कारण वे यह भी कर न पाए।

उन्हें यामा के उलाहने याद आए - 'घाटा सहना तो हम गरीबों की किस्मत है साहब!'

झमाझम बरसते आसमान का पानी स्टॉक हुआ लगता था, जो बारिश मद्धम होने लगी।

काले आसमान पर सुरमई रोशनी की गुंजाइश झाँकने लगी थी। सुलेमान ने गहरी साँस भर कर कहा - 'इस साल बारिश ने बहुत सताया।'

मौसम के बारे में ऐसे चालू कमेंट अजनबियों के बीच बातचीत शुरू करने का एक बहाना होता है। तो क्या यामा अब अजनबी हो गई, जो सुलेमान इस तरह के चालू हथकंडे अपनाकर बातचीत की गाड़ी आगे बढ़ाना चाहते थे। सुलेमान के भावुक मन और सांसारिक दिमाग के बीच एक जंग चल रही थी।

तभी यामा ने अपने दुलरवे बकरे को पुचकारा - 'शेरू बेटा, जादा भीग गए का?'

शेरू छींकने लगा।

कितनी निर्दोष खाल और स्वस्थ देह है शेरू की।

सुलेमान इसी शेरू को खरीदने आए थे।

'मेरा शेरू तो मेरी जान है।'

यामा ने बकरे को प्यार से सहलाया।

'मैं इसे घर से जाने नहीं दूँगी। गबरू के लिए शहर से मिंयाँ सेठ लोग दौड़ रहे हैं। रामपरसाद कहता है बेच दो, लेकिन मैं अपने गबरू को नहीं बेचूँगी। शेरू तो अभी बच्चा है। साल छह महीना रह ले घर में तब सोचा जाएगा।'

सुलेमान क्या कहते**?**

जिस स्त्री ने उनकी खुशी के लिए अपना तन-मन यूँ ही सौंप दिया हो, वह एक बकरा देने में इतना आनाकानी क्यों कर रही है? ये बात उनकी बुद्धि में घुस नहीं रही थी।

बोले - 'देखो, रज्जब भाई कहीं और गए हैं बकरा देखने। वो तो नुसरत आपी ने कहा था कि यामा के घर साल भर का एक बकरा मिल जाएगा। मैंने सोचा कि बकरा तो लेना ही है तो क्यों न तुमसे खरीद लूँ। कीमत जो तुम कहो। और यहाँ आने का एक और कारण तुमसे मिलना भी था। तुम हो सकता है कि मुझे भूल गई हो लेकिन तुम्हारे साथ गुजारे समय को मैं कभी भूल न पाया हूँ।'

उनकी आवाज में दर्द था।

उन्हें लगा कि यामा के छुहारे से सूखे मुँह पर तंज भरी मुस्कान आी है। वे अपनी ही धुन में थे - 'तुम तो ठीक-ठाक थीं यामा, फिर तुम्हारी ये हालत?'

'मत पूछिए साहब, हम मजदूरों की जिंदगी कैसे गुजरती है। कहाँ-कहाँ नहीं भटकी मैं?'

मवेशियों को पानी-बूँदी से बचाती यामा अपनी रामकहानी सुनाने लगी।

'हाँ, एक ठेकेदार अपने साथ अमरकंटक की खदानों में ले गया। अच्छा आदमी था वह। एक एक्सीडेंट में मारा गया। सुख मेरे नसीब में अधिक न था। मैं वहाँ से सिंगरौली चली गई। वहाँ कोलियरी में नई-नई कालोनियाँ बन रही थीं। बहुत काम था। कुछ साल वहाँ गुजारे। फिर वहाँ इस भड़वे रामपरसाद से परिचय हुआ। ये बहुत अच्छा आदमी है, इसे टीबी हो गई थी। इसलिए हम इस गाँव में आ गए। शहर जाती हूँ तो आपकी दीदी मेमसाब से मिल लेती हूँ। कभी-कभार वह दो-चार की मदद भी कर दिया करती हैं। वहीं आपके बारे में कुछ जानकारी मिल जाती है। उसी दिन दीदी मेमसाब ने बताया कि आप इस इलाके में आ गए हैं।'

बारिश रुकी जान यामा एक झाड़ू लेकर झोपड़ी के अंदर जमा पानी को बुहार कर सुखाने लगी। सुलेमान घर से बाहर निकल आए और आँगन में खाट बिछा कर बैठ गए।

यामा कोने पर पड़ी भीगी लकड़ियाँ लेकर चूल्हे के पास आई।

चूल्हा सुलगा तो अल्यूमिनियम की एक नकटी हंडिया में चाय का पानी चढ़ाकर झोंपड़ी के अंदर से चीनी वगैरा लाने चली गई।

सुलेमान क्या करते?

वे सोच रहे थे कि स्वाभिमानी यामा की वे किस तरह मदद करें। बकरा खरीदने के बहाने वे उसे मुँह-माँगी कीमत देना चाहते थे, लेकिन ये पागल अपना शेरू बकरा बेचने को तैयार नहीं। बिना दूघ की चाय खौलते-खौलते रज्जब भाई और रामपरसाद भी लौट आए थे।

रज्जब भाई ने बताया कि संजोग ठीक नहीं है। किसी से मुलाकात नहीं हुई। अब इस शेरू को खरीदना होगा, लेकिन दिक्कत यही है कि यामा इसे बेचने को तैयार नहीं है।

रामपरसाद को तो रज्जब भाई ने रुपये का लोभ देकर पटा लिया था, लेकिन रामपरसदवा यामा से डरता बहुत है। कह रहा था कि साहब से कहना कि वे खुद यामा से बात करें। शायद यामा मान जाए।

सुलेमान ने रज्जब भाई को कुहनियों से ठेल कर चुप-मारने का इशारा किया। चाय तैयार हुई। लाल-लाल रंगत की गर्म चाय। मौसम में अब ठंडक घुल रही थी। इसलिए चाय की तलब स्वाभाविक थी।

सुलेमान को स्टील के गिलास में ढेर सारी चाय मिली थी।

इसका मतलब यामा भूली न थी कि सुलेमान चाय पीते हैं तो 'पाटियाला पैग' बराबर!

गर्म चाय के कारण गिलास गर्म था, इसलिए सुलेमान ने जेब से रूमाल निकालकर गिलास पकड़ा। यामा डेगची में चाय लेकर गबरू और शेरू के पास जा बैठी।

अल्यूमिनियम के टूटे कटोरे में दोनों को पारी-पारी से वह चाय देने लगी। गबरू और शेरू को इस तरह चाय पीते देख रज्जब भाई हँसने लगे।

सुलेमान ने सोचा कि मवेशियों को कितना प्यार करती है यामा! इसी तरह यामा उन्हें भी तो टूट कर चाहती थी।

रामपरसाद ने बताया कि बड़े तुनकमिजाज हैं ये बकरे। धरती पर फेंका अनाज या पत्तियाँ ये नहीं खाते। जब तक हाथ पर रखकर प्यार से इन्हें न खिलाया जाए, ये भूखे मर जाना पसंद करते हैं। चाय खत्म हुई तो सुलेमान ने आस से यामा की तरफ देखा।

इस निगाह में वही याचना भरी हुई थी, जो जवानी की पहली मुलाकात में सुलेमान की आँखों में यामा ने देखी थी। यामा क्या करती!

रज्जब भाई ने रामपरसाद को इशारा किया।

रामपरसाद यामा को लेकर झोंपड़ी के अंदर चला गया।

बाहर आया तो रज्जब भाई को किनारे ले गया।

रज्जब भाई फिर सुलेमान के पास आए और कहा - 'चलिए, बारिश थम गई है, निकल लिया जाए।'

सुलेमान उसके साथ बाहर आए।

स्कूटर स्टार्ट की।

यामा और रामपरसाद विदा करने बाहर निकल आए।

सुलेमान ने यामा को एक नजर जी भर कर ताका।

देखा यामा के चेहरे पर वही संतुष्टि के भाव हैं, जैसे पूर्ण समर्पण की दशा में उसके चेहरे पर आते थे। रामपरसाद ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। यामा बुत बनी खड़ी रही। सुलेमान ने भारी मन से स्कूटर आगे बढ़ाया। मोड़ पर पहुँचकर उन्होंने घूमकर देखा, यामा वैसी ही खड़ी हुई थी। आगे जाकर उन्होंने स्कूटर रोकी और कहा - 'रज्जब भाई, इस्तिंजा (लघुशंका) कर ली जाए!'

एक गड्ढे में पानी था।

वहीं बैठकर इस्तिंजा किया गया।

फिर चलती स्कूटर में रज्जब भाई ने बताया - 'बकरा बेचने के लिए यामा तो एकदम तैयार नहीं थी। लेकिन अधिक पैसे की लालच में रामपरसाद तैयार हो गया। चौदह-पंद्रह किलो से रत्ती भर गोश्त कम नहीं है शेरू में। उस हिसाब से दो हजार का माल है। मैंने पंद्रह सौ में बात पक्की की है।'

सुलेमान जानते थे कि कुर्बानी के समय बकरे की कीमत बढ़ जाती है। सो उन्होंने कहा - 'एक-दो सौ रुपये चाहिए तो और बढ़ा दीजिए रज्जब भाई, लेकिन कल किसी हालत में बकरा घर पहुँच जाना चाहिए।'

रज्जब भाई ने कहा - 'वो आपको रामपरसाद को दारू-गाँजा के लिए सौ रुपये अलग से देने होंगे, बस्स!'

रज्जब भाई एक आँख दबाकर हँसे, किंतु सुलेमान ने उनका साथ नहीं दे पाए।

सुलेमान के हाथ में एक रस्सी है। मंत्रबिद्ध रस्सी।

सुलेमान सोच रहे हैं कि स्वयं यामा के गाँव चले जाएँ और उसे रस्सी वापस लौटा दें।

यामा को आज तक कुछ नहीं दे पाए, लेकिन इस मामूली-सी रस्सी रूपी इस अमूल्य भेंट को क्या वह अस्वीकार करेगी?